Austin's Theory of Sovereignty

(ऑस्टिन के सम्प्रभुता का सिद्धान्त)

आधुनिक काल में ऑस्टिन को सम्प्रभुता का सबसे बड़ा व्याख्याता माना जाता है। वह इंग्लैंड का विधानशास्त्री था, जिसने 1832 में प्रकाशित अपनी पुस्तक "विधानशास्त्र पर व्याख्यान" में सम्प्रभुता के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। ऑस्टिन हॉब्स और बेंथम के विचारों से प्रभावित था तथा बेंथम के समान ही इसका उद्देश्य भी कानून और परम्परा के बीच भेद करना तथा परम्परा पर कानून की श्रेष्ठता स्थापित करना था। ऑस्टिन ने सम्प्रभुता की परिभाषा निम्नलिखित शब्दों में की है —

"If a determinate human superior, not in the habit of obedience to a like superior, receives habitual obedience from the bulk of a given society, that determinate superior is the sovereign in the society and the society including the sovereign, is a society Political and Independent."

ऑस्टिन द्वारा दी गयी सम्प्रभुता की परिभाषा की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है —

① सम्प्रभुता स्वतन्त्र राजनीतिक समाज का एक अनिवार्य गुण है।

(2) सम्प्रभु निश्चयात्मक मानव श्रेष्ठ या मानव समूह है। वह एक निश्चित व्यक्ति या अधिकारी होता है जिस पर कोई कानूनी प्रतिबन्ध नहीं होता।

③ समाज का बहुसंख्यक भाग उस प्रधान व्यक्ति की आज्ञाओं का पालन करेगा।

④ ऑस्टिन का विचार है कि निश्चित प्रभु के प्रति आज्ञाकारिता स्थिर निरन्तर तथा आदतन होनी चाहिए।

⑤ प्रभु किसी उच्चतर अधिकारी की आज्ञा का पालन करने का अभ्यस्त नहीं होगा।

⑥ ऑस्टिन के अनुसार प्रभु का आदेश कानून है।

⑦ संप्रभुता अविभाज्य है। व्यक्तियों अथवा संघों में इसका विभाजन नहीं हो सकता।

आलोचना - ऑस्टिन एक वकील था तथा उसने सम्प्रभुता के सिद्धान्त की व्याख्या केवल वैधानिक दृष्टिकोण के आधार पर ही की है। व्यवहारिक पक्ष पर ध्यान न दिये जाने के कारण सर हेनरी मेन, ब्राइस, ब्लंटशली आदि विद्वानों ने इस सिद्धान्त की कटू आलोचना की है।

① समाज में ऑस्टिन के जनश्रेष्ठ को खोज पाना कठिन है। सर हेनरी मेन ने इसकी कठोर आलोचना की है. उन्होंने अपनी पुस्तक 'Early Institutions' में लिखा है कि इतिहास में इस प्रकार के निश्चित जन श्रेष्ठ के उदाहरण नहीं मिलते हैं। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक कानून का पालन लोगों ने इसलिए नहीं किया है कि उसके पीछे किसी निरंकुश राज्य का हाथ रहा है, कानून का पालन भावनाओं, प्रथाओं विश्वास, प्राचीन परम्पराओं आदि के आधार पर हुआ है।

② ऑस्टिन का सिद्धान्त लोकप्रभुता की अवहेलना करता है। प्रभुत्व शक्ति जनता में निहित होती है तथा जनता की इच्छा ही राज्य में सर्वोपरि है। मैकाइवर ने अपनी पुस्तक 'आधुनिक राज्य" में लिखा है कि " ऑस्टिन की विचारधारा उपनिवेशों के राजनीतिक जीवन पर ही लागू होती है. क्योंकि उस विचारधारा की विषय वस्तु स्वामी और दास की धारणा मात्र है।"

③ ऑस्टिन की कानूनी धारणा की भी कड़ी आलोचना की गयी है। लास्की कहता है कि सम्प्रभुता ही कानून का एकमात्र स्रोत नहीं है बल्कि उसके मान्य-मान्य परम्परागत प्रथाओं, न्यायिक निर्णयों आदि भी कानून के स्रोत के रूप में कार्य करता है। आलोचकों के अनुसार राज्य कानून को नहीं बनाता है बल्कि कानून ही राज्य को बनाता है।

④ ऑस्टिन की सम्प्रभुता की एक विशेषता अविभाज्यता है परन्तु आलोचकों का कहना है प्रत्येक राजनीतिक समाज में कर्तव्यों का बँटवारा होता है. इससे स्पष्ट है कि सम्प्रभुता ~~विभाजित~~ विभाजित की जा सकती है।

⑤ ऑस्टिन के सम्प्रभुता में शक्ति को अत्यधिक महत्व दिया गया है। परन्तु जनता कानूनों का पालन भय से नहीं वरन् इस कारण करती है कि कानून जनता की इच्छा को अभिव्यक्त करता है और उनके पालन में जनता का ही कल्याण निहित होता है।

⑥ सम्प्रभुता असीमित नहीं है। ब्लंटशली के अनुसार

"राज्य अपने समस्त स्वरूप में सर्वशक्तिमान नहीं हो सकता क्योंकि बाहरी मामलों में वह अन्य राज्यों के अधिकारों से और आन्तरिक क्षेत्र में स्वंय की प्रकृति तथा अपने सदस्यों के व्यक्तिगत अधिकारों से सीमित है।"

⑦ लास्की का कहना है कि "अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से एक स्वतंत्र तथा प्रभुत्वसम्पन्न राज्य का विचार मानवीय सुख-समृद्धि के लिए घातक है।"

निष्कर्ष — यद्यपि ऑस्टिन के सम्प्रभु सिद्धान्त की अनेक आलोचनायें की गयी है, लेकिन इनमें से अधिकांश आलोचनायें ऑस्टिन के दृष्टिकोण को ठीक प्रकार से न समझने के कारण ही की गयी है। गार्नर के शब्दों में "प्रभुत्व की कानूनी प्रकृति की जैसी धारणा ऑस्टिन ने सामने रखी है, वह स्पष्ट और तर्कयुक्त है और इसकी आलोचना अधिकांशतः गलतफहमी के कारण हुई है।"

— × —

डा० पूनम कुमारी
'राजनीति शास्त्र विभाग'
सर्व ना० सिंह राम कु० सिंह
महाविद्यालय सहरसा
भू० ना० मं० विश्वविद्यालय
मधेपुरा